चन्द्रिका प्रसाद जिज्ञासु

खण्ड-2

ग्रन्थावली



संपादक

कँवल भारती

जिज्ञासु जी आदि हिन्दू आन्दोलन की उपज थे, जिसके नेता स्वामी अछूतानन्द जी 'हरिहर' थे। स्वामी जी के वैचारिक आन्दोलन ने पूरे हिन्दी क्षेत्र में दलित वर्गों में, खासतौर से अछूत जातियों में नयी जागृति पैदा कर दी थी। वे समस्त शूद्र वर्ग को आदि हिन्दू अर्थात् आदिनिवासी मानते थे और द्विजों को विदेशी, जो बाहर से भारत में आये थे। उनके अनुसार, आर्यों ने यहाँ के मूल निवासियों को युद्ध में छल-बल से पराजित कर गुलाम बनाया था। उन्होंने शूद्रों को गुलामी से मुक्ति के लिये 'आदि हिन्दू' के रूप में संगठित किया था और सरकार से उन्हें स्वतन्त्र नागरिक के अधिकार देने का आन्दोलन चलाया था। उनके इस विचार से प्रभावित होकर सिर्फ अछूत जातियाँ ही नहीं, पिछड़ी जातियों के नेता भी उनके समर्थक हो गये थे। इनमें लखनऊ के शिव दयाल सिंह चौरसिया, चन्द्रिकाप्रसाद जिज्ञासु, रामचरन मल्लाह और इलाहाबाद के चौधरी श्यामलाल (धोबी) उस समय के प्रमुख व्यक्ति थे। जिज्ञासु जी (१८८५-१९७४) आयु में स्वामी जी (१८७९-१९३३) से सिर्फ छह साल छोटे थे। इसलिये उनमें मित्रता भी थी। स्वामी जी ने १९२० में आदि हिन्दू आन्दोलन की बुनियाद रखी थी। १९२० की लखनऊ कांफ्रेंस में उनकी भेंट जिज्ञासु जी से हुई, जो उस समय ४१ साल के युवक थे और भदन्त बोधानन्द जी के शिष्य थे। बोधानन्द जी, यद्यपि ब्राह्मण थे, पर आदि हिन्दू

आन्दोलन से प्रभावित होकर उन्होंने १९३० में 'मूल भारतवासी और आर्य' ग्रन्थ लिखकर आदि हिन्दू वैचारिकी का समर्थन किया था। इस ग्रन्थ को बोधानन्द जी ने बोलकर लिखाया था और लिखने वाले जिज्ञासु जी थे। रामचरन मल्लाह, एडवोकेट ने इस ग्रन्थ के प्रकाशन में आर्थिक सहायता की थी। इस ग्रन्थ में बोधानन्द जी ने अपने पहले अध्याय में ही 'आदि हिन्दू' आन्दोलन का उल्लेख किया है। रामचरन मल्लाह एडवोकेट भी आदि हिन्दू आन्दोलन से जुड़े थे, पर १९२७ में उससे अलग होकर ''मूल भारतवासी समाज'' की स्थापना कर ली थी। मूल भारतवासी की अवधारणा भी उन्होंने स्वामी जी के आदि हिन्दू आन्दोलन से ली थी। एक प्रकार से 'मूल भारतवासी और आर्य' ग्रन्थ समकालीन दलित नवजागरण का आधार ग्रन्थ था।

-इसी पुस्तक से

बीसवीं सदी के भारत में न केवल औपनिवेशिक गुलामी के खिलाफ संघर्ष हुआ, अपितु सामाजिक–सांस्कृतिक गुलामी के खिलाफ भी प्रभावकारी संघर्ष किया गया। भारतीय नवजागरण में इन संघर्षों की अनुगूँज सुनाई देती है। बांग्ला नवजागरण अभिजात प्रवृत्तियों से मुक्त नहीं हो सका, लेकिन महाराष्ट्रीय नवजागरण में सामाजिक वर्चस्ववाद यानी ब्राह्मणवाद के विरुद्ध व्यवस्थित वैचारिक संघर्ष का आरम्भ उन्नीसवीं सदी में ही महात्मा जोतिबा फुले के नेतृत्व में हुआ था। बीसवीं सदी में भीमराव अम्बेडकर ने इसे व्यापक वैचारिक स्वरूप दिया। दक्षिण भारत में रामासामी नायकर ने इसे एक और विस्तार दिया। गाय, गीता और गंगा के ब्राह्मणवादी हिंदुत्व में लिपटा उत्तर भारतीय समाज राजनैतिक आवेगों के साथ इस हाल झूल रहा था कि उसे अपने सामाजिक–सांस्कृतिक हालात् के अध्ययन की फुर्सत ही नहीं थी। श्री बोधानंद (1874–1952) स्वामी अछूतानंद (1879–1933) और चन्द्रिकाप्रसाद जिज्ञासु (1889–1974) की त्रयी ने बहुजनों के सामाजिक–सांस्कृतिक–शोषण की पड़ताल की और फिर इसके खिलाफ एक संघर्ष की शुरुआत की। बोधानन्द और अछूतानंद की वैचारिकता को चन्द्रिकाप्रसाद जिज्ञासु ने आगे बढ़ाया और इस पूरे संघर्ष को एक व्यवस्थित गति दी। यह चुनौतीपूर्ण कार्य था। लखनऊ के सआदतगंज में उन्होंने एक प्रेस और प्रकाशन की स्थापना की। प्रकाशन का नाम था बहुजन कल्याण प्रकाशन और प्रेस का नाम समाज सेवा प्रेस। थोड़े आध्यात्मिक विचलन को नजरअंदाज कर दिया जाय तो कुल मिलकर उनका व्यक्तित्व संतनुमा था। उन्होंने स्वयं बोधानंद और अछूतानंद की जीवनियां लिखी और प्रकाशित की। बाबासाहेब का जीवन संघर्ष उनकी लिखी ऐसी महत्वपूर्ण कृति है, जिसे पढ़कर हिंदी भाषी भारत के लोग अम्बेडकर के जीवन और कृतित्व से परिचित हुए। अम्बेडकर की अनेक पुस्तकों के अनुवाद और प्रकाशन का श्रेय जिज्ञासु जी को जाता है। हिंदी भाषी इलाके को उन्होंने अम्बेडकर से परिचित कराया। लेकिन इतना ही कहना शायद उनके महत्त्व को सीमित करना होगा। उन्होंने एक मन्त्र दिया कि दलित और पिछड़ी जातियों को एक साथ आये बिना ब्राह्मणवाद से निर्णायक लड़ाई नहीं लड़ी जा सकती। मार्क्सवाद, गांधीवाद, लोहियावाद और अन्य दूसरे समाजवादी संघर्षों से चुपचाप अलग रहते हुए उन्होंने मनोयोग पूर्वक फुले–अम्बेडकरवाद की जमीन उत्तरभारत में तैयार की। इसी जमीन पर और उनके ही सूत्र यानी बहुजन (दलित–पिछड़ा समूह) के साथ बीसवीं सदी के उत्तरार्ध में कांशीराम ने एक राजनीतिक संघर्ष की बुनियाद रखी और कांग्रेस व अन्य पार्टियां धराशायी हो गयीं। फिलहाल भाजपा का उभार केवल यह बतलाता है कि सभी प्रकार की वर्चस्ववादी शक्तियां आखिरी लड़ाई के लिए इकट्ठी हो गयी हैं। इसका जवाब भी बहुजनों की ओर से फुले–अम्बेडकरवाद के आधार पर ही मिलेगा। इसलिए आज जिज्ञासु जी कुछ अधिक ही याद आते हैं।

इतने महत्त्व पूर्ण लेखक–विचारक की रचनावली उपलब्ध नहीं थी। उन्हीं की परम्परा के योद्धा लेखक कँवल भारती ने जिज्ञासु जी की रचनावली परिश्रम पूर्वक संपादित कर ऐतिहासिक महत्त्व का कार्य किया है। यह रचनावली बहुजनों के समग्र संघर्ष को बल तो प्रदान करेगी ही, एक नए आधुनिक भारत का स्वरूप भी निर्धारित करेगी, जो अधिक लोकतांत्रिक और न्यायपूर्ण होगा।

–प्रेमकुमार मणि

The Marginalised Publication

978-81-935616-2-1

978-81-935616-2-1

eBook available

₹ 900

पं. चन्द्रिका प्रसाद जिज्ञासु
के सुपुत्र
ब्रह्मानन्द को
सादर समर्पित,
जिनके सहयोग से इस
ग्रन्थावली
का कार्य सम्पन्न हुआ।

निवेदन

डा. अंगने लाल की बड़ी इच्छा थी कि चन्द्रिका प्रसाद जिज्ञासु पर दलित साहित्य में कोई बड़ा काम हो– शोध छात्रों के अध्ययन के लिये उनकी रचनावली का सम्पादन किया जाय और उनके साहित्यिक अवदान पर आलोचनात्मक ग्रन्थ लिखा जाय, अन्यथा लोग उन्हें भूल जायेंगे। पता नहीं, उन्हें क्यों मेरी क्षमताओं पर इतना विश्वास था कि कहते 'यह काम तुम ही कर सकते हो?' 19 मार्च 1978 को, मैंने जिज्ञासु जी के सुपुत्र ब्रह्मानन्द से मिलकर उनके व्यक्तित्व और संघर्ष के सम्बन्ध में, जो जानकारी नोट की थी, उसके आधार पर एक संक्षिप्त लेख लिखकर मैंने बरेली के 'विश्वमानव' में छपा दिया था। सन् 2000 में, जब मैं 'माझी जनता' (हिन्दी) का सम्पादक बना, तो उसके दो अंक मैंने जिज्ञासु जी पर केन्द्रित किये थे। वे दोनों अंक हिन्दी जगत में बहुत पसन्द किये गये और आज भी पाठक उनकी माँग करते हैं। लेकिन, इसके सिवा कोई बड़ा काम जिज्ञासु जी पर नहीं किया जा सका।

2009 में, जब मैंने स्वामी अछूतानन्द जी 'हरिहर' के 'आदि हिन्दू आन्दोलन' और साहित्य पर काम किया, तथा उनकी रचनाओं की संचयिता तैयार की, तो उसी समय चन्द्रिका प्रसाद जिज्ञासु ग्रन्थावली की योजना भी दिमाग में आकार लेने लगी। इधर, मुद्राराक्षस (लखनऊ), बद्री नारायण तिवारी, गुरुप्रसाद मदन (इलाहाबाद), गोपाल नायडू (नागपुर) और मोहनदास नैमिशराय (दिल्ली) का भी जबरदस्त आग्रह था। अतः जिज्ञासु जी का जितना भी साहित्य मेरे पास सुरक्षित था, उस सबको मैंने टाइप करा दिया। यह सारा मैटर बारह सौ पृष्ठों में तैयार हुआ। अब समस्या जिज्ञासु जी के परिवार से स्वीकृति मिलने की थी। 1977 में, अवनीश जी ने मुझे जिज्ञासु जी की सामग्री इसी उद्देश्य से उपलब्ध करायी थी कि मैं उसका किसी न किसी रूप में उपयोग करूँगा। इसमें उनकी अनुमति शामिल थी। यदि उनकी अनुमति न होती, तो वह दुर्लभ सामग्री मुझे

उपलब्ध ही क्यों कराते। पर प्रकाशक के लिये लिखित अनुमति की आवश्यकता थी। अत: मैं इस सम्बन्ध में ब्रह्मानन्द जी से मिलने लखनऊ गया, पर उनसे भेंट न हो सकी। मैं अपना उद्देश्य और फोन नम्बर उनके सुपुत्र को देकर चला आया था। पर, उन्होंने मुझसे कोई सम्पर्क नहीं किया। बाद में मुझे पता चला कि यह लिखित अनुमति उन्होंने बद्री नारायण, निदेशक दलित अध्ययन केन्द्र, जी.बी. पन्त सामाजिक विज्ञान संस्थान, झूंसी इलाहाबाद को दे दी। मैंने ब्रह्मानन्द जी को पत्र लिखा, पर उसका कोई जवाब नहीं आया। जब मैंने बद्री जी को फोन किया, तो उन्होंने मुझे यह आश्वासन दिया कि वह मेरी सामग्री का उपयोग कर लेंगे। इस आश्वासन के बाद, जिज्ञासु ग्रन्थावली के बारह सौ पृष्ठों के दोनों खण्ड प्रकाशन की प्रतीक्षा में ऐसे ही पड़े हैं।

जिज्ञासु जी एक मिशनरी लेखक थे। रायल्टी की कोई समझ भी उस समय दलित साहित्य में विकसित नहीं हुई थी। जिज्ञासु जी ने बहुजन कल्याण प्रकाशन से अनेक लेखकों की पुस्तकें प्रकाशित की थीं। पर उन्होंने न किसी लेखक को रायल्टी दी और न किसी लेखक ने उनसे रायल्टी माँगी थी। मेरी खुद की एक पुस्तक के कई संस्करण वह निकाल चुके थे। उन्होंने डा. आंबेडकर की कितनी ही अँग्रेजी पुस्तकों के हिन्दी अनुवाद करा कर छापे, जबकि वे सभी पुस्तकें 'कापी राइट' के अन्तर्गत थीं। पर, उन्होंने कभी इस बात की परवाह नहीं की कि बिना अनुमति के अनुवाद और प्रकाशन अवैधानिक है। उन्होंने रामास्वामी नायकर की पुस्तकों के अनुवाद के लिये जरूर अनुमति ली थी, क्योंकि नायकर जी उस समय जीवित थे। उनका ध्येय सामाजिक-परिवर्तन और समाजवादी धारा के साहित्य का अधिक-से-अधिक प्रचार करना था और इसलिये वह न्यूनतम मूल्य पर 'न लाभ-न हानि' के सिद्धान्त पर पुस्तकें प्रकाशित करते थे।

मेरा ध्येय भी जिज्ञासु के साहित्य से आज की पीढ़ी को परिचित कराना है, ताकि दलित साहित्य के विद्यार्थी और विद्वान यह जान सकें कि जो दलित साहित्य आज चर्चा में है और विश्वविद्यालयों में पढ़ाया जा रहा है, उसकी आधारशिला स्वामी अछूतानन्द जी 'हरिहर' ने रखी थी और बुनियाद चन्द्रिका प्रसाद जिज्ञासु ने भरी थी। जिज्ञासु जी के साहित्यिक अवदान को जाने बगैर हिन्दी दलित साहित्य के इतिहास को नहीं समझा जा सकता।

इसी वर्ष 24 मार्च को बौद्ध साहित्य और इतिहास के महान लेखक डा.

अंगने लाल की मृत्यु हो गयी। मेरी हार्दिक इच्छा थी कि जिज्ञासु ग्रन्थावली के दोनों खण्ड, पुस्तकाकार में, वह अपनी आँखों से देखते। मुझे भी उनका आर्शीवाद मिलता। अफसोस कि यह सम्भव न हो सका। जिस रात, ब्रजेन्द्र गौतम से मुझे उनकी मृत्यु का दुखद मैसेज मिला, उसी समय मैंने ग्रन्थावली न सही, दलित साहित्य के हित में एक संचयिता प्रकाशित कराने का फैसला कर लिया था। परिणामत: 'चन्द्रिका प्रसाद जिज्ञासु- रचना संचयन' आपके हाथों में है। यह संकलन उनकी सम्पूर्ण कृतियों से चयनित किया गया है। इसमें उनका एक दुर्लभ लेख 'बाबासाहेब डा. आंबेडकर और महात्मा गाँधी' भी है, जो मुझे डा. अंगने लाल के सौजन्य से प्राप्त हुआ था। यह लेख उनकी संस्था 'प्रबुद्ध अम्बेडकर सांस्कृतिक संस्थान, लखनऊ' की वार्षिक पत्रिका 'लोकयान' के 1966 के अंक में छपा था। यह लेख उनकी स्वीकृति से मेरी 1972 में सम्पादित पुस्तक 'भीम पुष्पावली' में संकलित किया गया था। इसमें उनकी वे तीन कविताएँ भी हैं, जो ब्रिटिश द्वारा जब्त की गयी थीं। ये कविताएँ 'जब्तशुदा नज़में' (1976) शीर्षक पुस्तक से साभार ली गयी हैं, जिसके सम्पादक खलीक अंजुम एवं मुज्तबा हुसैन हैं और प्रकाशक हिन्द पाकेट बुक्स प्रा.लि. शाहदरा, दिल्ली है।

अन्त में, मैं उन सभी लोगों का आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने मेरा उत्साह बढ़ाया और इस काम में मेरी सहायता की। मैं दलित लेखक के. नाथ (कानपुर) और गुरुप्रसाद मदन (इलाहाबाद) का भी अत्यन्त आभारी हूँ, जिनके सौजन्य से मुझे जिज्ञासु जी की वे कृतियाँ प्राप्त हुईं, जो मेरे पास नहीं थीं। जिज्ञासु जी के सुपुत्र ब्रह्मानन्द जी का मैं सचमुच बहुत कृतज्ञ हूँ, जिनके द्वारा उपलब्ध करायी गयी सामग्री के बिना यह काम सम्भव नहीं हो पाता।

–कँवल भारती

रामपुर
7 मई 2011

अनुक्रम

भूमिका
पृष्ठ / 13

पॉचवीं पुस्तक
सन्त प्रवर रैदास साहेब
पृष्ठ / 31

छठी पुस्तक
रावण और उसकी लंका
पृष्ठ / 263

सातवीं पुस्तक
श्री 108 स्वामी अछूतानन्द जी 'हरिहर'
पृष्ठ / 253

आठवीं पुस्तक
बाबा साहेब का जीवन संघर्ष
पृष्ठ / 342

भूमिका

चन्द्रिका प्रसाद जिज्ञासु को हिन्दी साहित्य में कोई नहीं जानता। हिन्दी साहित्य के जितने भी इतिहास लिखे गये, उनमें से किसी में भी उनका नाम दर्ज नहीं है। दरअसल, वे जिस धारा के लेखक थे, वह पूरी धारा ही हिन्दी साहित्य के इतिहास में अनुपस्थित है। यह क्रान्ति की धारा थी- सामाजिक क्रान्ति की और उसमें भी वर्णव्यवस्था के विरोध की। लेकिन, इस धारा की मुख्य विशेषता यह थी कि इसके उद्‌भावक, प्रतिष्ठापक और विचारक सभी दलित वर्गों के लेखक थे। उनके दलित होने की वजह से ही हिन्दी साहित्य के इतिहास में इस धारा के साहित्य को शामिल नहीं किया गया, जबकि तीन कहानियाँ और पाँच निबन्ध लिखने वालों को भी उसमें प्रमुखता से स्थान दिया गया। वास्तव में, साहित्य की दुनिया में ब्राह्मणों का वर्चस्व था, वे ही साहित्य-सृजन को अपना अधिकार समझते थे। इस अधिकार क्षेत्र में किसी भी गैर द्विज का प्रवेश स्वीकार नहीं था- न दलित वर्गों का और न मुसलमानों का। जिज्ञासु जी दलित वर्ग के भी थे और ब्राह्मणवाद के विरोधी भी। इसलिये सिर्फ वे ही नहीं, उनके जैसे तमाम दलित लेखक ब्राह्मण लेखकों के लिये वर्जित क्षेत्र से थे। लेकिन, इसी वर्जित क्षेत्र में इन लेखकों ने क्रान्ति प्रवाहित कर दी थी।

जिज्ञासु जी के बारे में लिखना आसान काम नहीं है, क्योंकि उनका व्यक्तित्व बहुआयामी था। वे सिर्फ साहित्य तक ही सीमित नहीं थे, वरन् वे एक्टिविस्ट भी थे। वे प्रकाशक थे, सम्पादक थे और नयी सामाजिक धारा के उद्‌भावक भी थे। उनके बारे में लिखना इस नयी धारा के उद्‌भव और विकास पर लिखना है। बिना उसे समझे, न उनके साहित्य को समझा जा सकता है और न उनकी वैचारिकी को।

जिज्ञासु जी आदि हिन्दू आन्दोलन की उपज थे, जिसके नेता स्वामी अछूतानन्द जी 'हरिहर' थे। स्वामी जी के वैचारिक आन्दोलन ने पूरे हिन्दी क्षेत्र